Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

जानकीहरणम् में प्रकृति चित्रण : एक परिशीलन

डॉ गिरीश प्रसाद मिश्र
सुभाष नगर, सैनी, सिराथू, कौशाम्बी, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 2 Issue 3
Page Number : 135-140
Publication Issue :
May-June-2019
Article History
Accepted : 20 June 2019
Published : 30 June 2019

सारांश– महाकवि कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में सेतु बन्धन का वर्णन, तपोवन का वर्णन, आश्रम का वर्णन, पर्वत की शोभा का वर्णन, राक्षसिनियों के केलि का वर्णन आदि रूपों में भी प्रकृति चित्रण किया है।

मुख्य शब्द – कुमारदास, जानकीहरणम्, महाकाव्य, प्रकृति चित्रण, सर्ग।

कुमारदास का कवि व्यक्तित्व कथा के उपस्थापन, काव्य परम्परा के अनुगमन और काव्य पद्धति एवं शब्दसंहति के प्रयोग में उतना ही उभरा, जितना वर्णनों में प्रयुक्त नवीन कल्पनाओं में उत्तरवर्ती संस्कृत कवियों ने जीवन के अङ्कन, जीवन दर्शन के सम्प्रेषण और कलात्मक सन्तुलन के प्रति अपने को अत्यन्त सावधान नहीं रखा। उदाहरणार्थ व्यास और वाल्मीकि ने जिस व्यापक पृष्ठभूमि में और जैसी अकृतिम भंगिमा से अपनी रचनाओं में जीवन की सृष्टि कर दी और एक जीवन दृष्टि भी प्रदान की या कालिदास ने जिस तरह जीवन का परिपक्व सौन्दर्य बोध परिष्कृतम कलापद्धति के माध्यम से व्यक्त किया, संस्कृत के उत्तरकालीन महाकवि से वैसी आशा नहीं की जा सकती। किन्तु उत्तरकालीन कवियों ने वर्णन विधि में कुछ न कुछ नवीन कल्पना जोड़ने की सतत चेष्टा की। इस दृष्टि से कुमारदास के काव्य में निःसन्देह ऐसे वर्णन स्थल हैं, जो उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व को प्रस्तुत करते हैं। वर्णनों में उन्हें कदाचित् सर्वाधिक सफलता प्रकृति वर्णन में मिली। संस्कृत के कवि ने अपने को अपने चारों ओर के प्राकृतिक परिवेश से गहराई से जोड़े रखा है। इसलिए उसके लिए प्रकृति जड़ दृश्यावली मात्र नहीं है, वह तो सर्वथा चेतन और उसकी भावनाओं की सहभोक्त्री एवं सहानुभवित्री है। कुमारदास की दृष्टि भी ऐसी है, किन्तु प्रकृति के प्रति उनकी दृष्टि में अनूठी कल्पना प्रवणता भी है।

बसन्त वर्णन :–

महाकवि कुमारदास ने अपने महाकाव्य ''जानकीहरणम्'' में बसन्त ऋतु का तृतीय अध्याय में तीसरे श्लोक से लेकर तेरह श्लोक तक सुन्दर एवं मनोरम वर्णन किया है। कवि का कथन है कि बसंत के आविर्भाव पर प्रकृति में भी शृंगार का आविर्भाव हो आता है। प्रकृति का प्रत्येक जीव बसन्त के आगमन से प्रसन्नता का अनुभव करने लगता है। कंटक से भरी हुई, खड़ी नाल के ऊपर अपनी पंखुड़ियों को समेटे हुए नव कमल ऐसा उठ खड़ा होता है जैसे जल के भीतर रहने के कारण रात्रि से भयभीत होकर बसन्त की गरमाहट पानी की इच्छा से बाहर निकल आया हो।[1] बसन्त के आगमन से करवीर वृक्षा की नई–नई रक्त

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

वर्ण की कलिया फूटने लगती हैं[2] तो अशोक वृक्ष भी उससे अछूता नहीं रहता, उसके तने में भी नये–नये अंकुर फूटने लगते हैं।[3] कवि का कथन है कि नई कलियों से लदे हुए मनोहर चम्पक वृक्ष ऐसे लगते हैं जैसे बसन्त की वनस्थली ने हजारों बस्तियों के दीपक वृक्ष लगा दिये हों।

यथा :–

''वृक्षा मनोज्ञद्युति चम्पकाख्या रूपं वितेनुनकुड्मलाढयाः।
न्यस्ता वसन्तस्य वनथलीभिः सहस्रदीप इन दीपवृक्षाः।।''[4]

बसन्त के प्रभाव से ही कर्णिकार का वृक्ष पर्वत के शिखर पर अपना सौन्दर्य बिखेरने लगता है।[5] प्रमदाओं की चञ्चल आँखों की प्रभा से नई अशोक की पत्तियों में पोढ़ी पत्तियों का सा रंग आने लगता है,[6] तो भ्रमर भी आम्र के वृक्षों की मञ्जरियों को छोड़कर अशोक के वन में पैर रखना उचित नहीं समझते।[7] कमलों के वन ने जब यह देखा कि उसके शत्रु, हेमन्त के प्रभाव का बसन्त के सूर्य रश्मियों ने नष्ट कर दिया तो वह प्रेम से दिल खोलकर इस प्रकार हंसता है जैसे उसका काँटा निकल गया हो।[8] कवि का कथन है कि खिले हुए पुष्पों से विभूषित पलाश का वृक्ष जिसमें पुष्पों से लहलहाती कुछ लता लिपटी हुई थी, ऐसे चमचमा उठा जैसे बसन्त ने कामदेव को जलाने वाली अग्नि की ढेर से भस्म को उधेड़ते हुए कुरेद दिया हो।[9]

यथा :–

''विनिदपुष्पाभरणः पलाशः समुल्लसत्कुन्दलतावनद्धः।
उद्भुतभस्मा मधुनेव रेजे राशीकृतो मन्मथदाहवहिनः।।''

अपने प्रियतम हेमन्त के विछोह से रात्रि जैसे म्लान हो जाने के कारण क्षय होने लगी और दिन भी बसन्त की कड़ी धूप से जैसे थककर क्रमशः मन्दगति से चलने लगता है।[10]

वर्षा वर्णन :– महाकवि कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में ग्यारहवें सर्ग में श्लोक संख्या 38 से लेकर 96 तक वर्षा ऋतु का मनोहारी चित्र खींचा है। वर्षा ऋतु के शुभागमन से पवन से फैलाया हुआ बादल, सूर्य मण्डल रूपी सिंह के पिंजड़े जैसा, समर के लिए जाते, राजहर्षकारी जयगज का मुकुट सा प्रतीत होता है।[11] बादलों के मृदङ्ग के समान, हृदय को हरने वाले, गंभीर नाद से आह्लादित, चमकीली भौं वाले मयूरों ने वृष्टि के भय से, अपने ऊपर हिलती हुई पूँछ के समूह का चॅदोवा कर लिया था।[12] वर्षा का ही प्रभाव था कि देवराज इन्द्र के धनुष के रजित मेघ समूह उठ आते हैं,[13] तथा बादल के किनारे पर सुवर्ण के समान चमकती हुई बिजली, तारागणों की निगलती हुई सूर्य के किरणों के समप्रभ उदर को चीर कर निकलती हुई शोभायमान लगती है।[14] कवि की कल्पना है कि समस्त लोक को सन्तप्त करने वाले ग्रीष्म पर विजय का उत्सव छाया है, 'नाचो मयूरो नाचो।' मानो यह कहते हुए समय ने बिजलियों रूपी सैकड़ों कनकदण्डों से बादल रूपी नगाड़े बजा दिये।[15]

यथा :–

''भुवनातपनघर्म्यजयोत्सवः समुदितः परिनृत्यत बर्हिणः।
इति जघान यथा समयस्तडित्कनकदण्डशतैर्घनदुन्दुभिम्।।''

अस्तु वर्षा–वर्णन उनके ऋतु वर्णनों का सुन्दर प्रतिनिधि है।

शरद् वर्णन :–

कुमारदास ने अपने महाकाव्य ''जानकीहरणम्'' में बारहवें सर्ग में प्रथम से बीस श्लोक तक शरद् ऋतु का मनोरम वर्णन किया है। शरद् ऋतु में जहाँ पर्वत के नीच, पानके नितान्त अभाव से चावल के खेत सूख गये थे,[16] वहीं सरोवर ने हंस गान के समय शास्त्र मतानुसार, लय के साथ, अपने कमलहस्त की

चमकती हुई पल्लवाङ्गुलियों से मानो समपरिमित ताल दे रहा था।[17] शरद् ऋतु में शुक्रों की पंक्ति अपनी प्रभा से इन्द्रधनुष की प्रतिरूपता करती है,[18] तथा हंस वायु के सहारे दूर दूर तक फैले नजर आते है।[19] कवि का कथन है कि नये कल नाल के समान वेत, शरद् ऋतु में धारा प्रवाह के समान फेंका हुआ, बादलों का समूह, ऐसा लगता था, जैसे इन्द्रधनुष से धन का हुआ दिगाङ्गनाओं का ढेर हो[20]–

''विभान्त्ययी बालमृणालपाण्डुरा विसृष्टधारा शरदभ्रसञ्चयाः।
सुरेन्द्र चापेन विधूय सञ्चिता दिगङ्गनानामिव तूलराशयः।।''

सूर्योदय का वर्णन :–

कुमारदास ने सूर्योदय का वर्णन अत्यल्प किया है। उन्होंने प्रथम सर्ग के 69वें, तृतीय सर्ग के 78वें तथा सोलहवें सर्ग के 71वें श्लोक में सूर्योदय का वर्णन किया है। ''रात्रि समाप्त हो चुकी, चन्द्रदेव अस्ताचल को चले गये। हे मुकुलित कमलालाक्षी। तू क्या अब तक सो रही है।'' यह कहकर क्रीडोद्यान तक फैली हुई सरसी को जगाने के लिए यह तरूण सूर्य अपने आताभ्रकरों से थपकिया दे रहा है[21]

''विरामः शर्वर्या हिमरुचिरवाप्तोऽस्तशिखरं।
किमद्यापि स्वापस्तव मुकुलिताम्भोरुहदृशः
इतीवायं भानुः प्रमदवनपर्यन्तसरसी
करेणाताम्रेण प्रहरित विबोधाय तरूणः।''

कवि ने उपर्युक्त श्लोक में सूर्योदय का अत्यन्त मनोहारी वर्णन किया है, वस्तुतः यह श्लोक संस्कृत साहित्य का अनमोल रत्न है।

सूर्यास्त का वर्णन :–

महाकवि कुमारदास में अपने महाकाव्य ''जानकीहरणम्'' में सूर्यास्त का वर्णन विस्तार से किया गया है। उन्होंने महाकाव्य के तृतीय सर्ग के 64 65, 66 श्लोकों में तथा सोलहवें सर्ग के दूसरे, तीसरे तथा छठवे श्लोक में किया है। कवि ने जहाँ एक ओर सूर्य को स्त्रियों के केसर से रञ्जित गोलस्तन के सदृश शोभायमान परदेशियों के चित्त में तपन छोड़कर , तरङ्गों से आन्दोलित पश्चिमी समुद्रान्त में डूबते हुए चित्रित किया है,[22] तो वहीं दूसरी ओर फूट मूंगे के सदृश लाल वह सूर्य कमल की पंखुड़ियो की तरह अपने कमल के समान हाथ सिकोड़ते हुए नजर आता है।[23] इतने में ही उनकी लेखनी सन्तुष्ट नहीं होती बल्कि अत्यन्त मनोहर वर्णन करती है। ढाल पर अरुण, (सूर्य का सारथी) ने बड़ी दृढ़ता से अपने हाथों से रास को खींचा जिसके कारण घोड़ो के कन्धे झुक गये और उनके सुन्दर नथुने तिरछे हो गये, इस प्रकार सूर्य के घोड़े, पहाड़ की चोटी से नीचे उतरे और उतरते समय रथ के पहिए उनके जाँघों से सट गये।[24]

''अरुण करदृढावकृष्टरश्मि प्रणामितकन्धरमुग्नचारूघोणा।
दिवस करहया गिरीन्द्रभितेर्जघनपतद्रथनेमयो वतेरूः।''

सन्ध्या वर्णन :– कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में आठवें सर्ग के लोक संख्या 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62 तथा सोलहवें सर्ग के 4, 5, 8, 9, 10, 11, 13 में सन्ध्या वर्णन किया है। समुद्र के बीच में स्थित सूर्य के बिम्ब को अन्धकार का जाल घेरता है,[25] तो पूर्ण चन्द्र के उदय होने पर अस्ताचल पर अस्त होता हुआ सूर्य का बिम्ब, आकाश रूपी रथ का एक ऐसा पहिया लगता है जिसका घेरा धातुओं के चूर्ण से लिप्त हो।[26] सन्ध्या ने तो भ्रमरों के झुण्डों को भी शंका में डाल दिया है वे, ऐसे कुमुद को देखकर जो पहले लाल था, किन्तु अन्धकार के कारण श्यामल हो गया है निर्णय करने में अपने को असमर्थ पाते हैं कि यह लाल कमल है या नील कमल।[27] सन्ध्या ने तो पहले अन्धकार का रूप ग्रहण किया। फिर अतीव पिंगल वर्ण तारिकाओं का सृजन किया तदनन्तर अपनी कलाओं के द्वारा चन्द्रमा से सम्पूर्ण भवन का एकीकरण किया। इस प्रकार

उसने त्रिनेत्र (शिव) का रूप धारण किया।[28]

यथा :–

''प्रथम गमितमन्थकारिभावं पुनरतिपिङ्गलतारंक विधाय।
भुवनमथ कलात्मा समस्य त्रिनयनरूपमलम्भयत्प्रदोषः।।''

चन्द्रोदय का वर्णन :– कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में सोलहवें सर्ग के पन्द्रह, सत्रह, अट्ठारह, उन्नीस, बीस, इक्कीस, बाइस, तेइस, चौबीस, तथा पच्चीस श्लोकों में चन्द्रोदय का सुन्दर वर्णन किया है। चन्द्रमा अपने उदय के द्वारा न केवल सुन्दर नितम्ब वाली स्त्रियों के हृदय में एक नये निर्झर की शंका उत्पन्न कर उनमें काम का सञ्चार करता है,[29] अपितु पथिकों की विरहिणी की आँखे जो पहिले माणिक्य की प्रभा की तरह लाल थीं, चन्द्रोदय होने पर उसकी किरणों के घिर जाने के कारण वे चन्द्रकान्तमणि के स्वाभाविक काम को दिखलाने लगती हैं।[30] कवि की कल्पना है कि ''इन निशाचरियों के अनुपम मुखों की कान्ति से हमी केवल नही हारे हैं। देखो यह मृग भी उनके कटाक्षों से हार गया है'' ऐसा कहता हुआ वह चन्द्रमा जैसे दुनियाँ को अपने मृगाङ्क को दिखला रहा है–[31]

''द्युतिभिरवजितो निशाचरीणामहमतुल्स्य न केवलं मुखस्य।
अयमपि हरिणों जितः कटाक्षैरति जगतमिव दर्शयन मृगाङ्कम्।''

रात्रि वर्णन :– महाकवि कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में आठवें सर्ग के श्लोक संख्या 66 से लेकर 92 तक रात्रि का मनोरम चित्र खींचा है। मत्त मयूर की कष्ठ की तरह रंग विरंगा आकाश,[32] पूर्व दिशा में दमकते हुए चन्द्रमा का निकलना[33] तथा पश्चिम के आकाश में लाल लाल तारों का इस प्रकार लगना जैसे सूर्य के रथ की लोहे की पहिए की टक्कर से मेरु के शृङ्ग से आग की चिनगारियाँ निकल रही हों।'[34] सूर्य के भय से अपनी आखें बन्द की हुई तारिकायें सूर्य की रश्मियों के चले जाने से दिशा के मुख को सजाने के लिए खोखली हुई नजर आती हैं।[35] चन्द्रमा अपनी किरणों को चारों ओर पेड़ों के रन्ध्रों में इसलिए छोड़ता है ताकि वह लता मण्डपों में घुसे हुए मृङ्ग के समान काले अन्धकार को खींचकर निकाल सके। कवि की कल्पना है कि चाँदी के टुकड़ों के समान चमकते हुए तारे ऐसे शोभायमान हैं जैसे उदयाचल से उदय होते हुए गृहपति चन्द्रमा के मार्ग में दिग्वधुओं ने चारों ओर लाजा बिखेरा हो।[36]

यथा :–

''तारका रजतभङ्गभासुरा लाजका का विभान्ति तानिताः।
दिग्वधुभिरुदयादुदेष्यतो वर्त्मनि गृहपतेः समन्ततः।।''

जल विहार का वर्णन :– जल क्रीड़ा भारत के प्राचीन मनोविनोद के साधनों में एक है। महाकवि कुमारदास ने ''जानकीहरणम्'' महाकाव्य में तृतीय सर्ग के बत्तीस से लेकर अट्ठावन श्लोकों तक जल विहार का सुन्दर वर्णन किया है। ग्रीष्म ऋतु में समागमोपरान्त विशेषतः जल क्रीड़ा का प्रचलन था। दुराराध्य स्वभाव वाले रावण को सेवा से सन्तुष्ट करने की इच्छा से 'ग्रीष्म' उसके 'जल कीडा–दिन' की प्रतिज्ञा करता हुआ वर्णित है।[37] इससे ध्वनित होता है कि राजागण अपने व्यस्त जीवन में भी किसी दिन पूर्ण अवकाश ग्रहण करके आमोद–प्रमोद में निमग्न हो जाते थे। रति के अनन्तर राम और सीता ने "दीर्घिका–जल तरंगो का सुखोपभोग किया था।[38] कमलों का पराग जाल तो दशरथ की युवतियों की क्रीड़ा से आलोकित होने के कारण बहुत क्षुब्ध हो गया। नव कमलों से भरा हुआ उस सरोवर का जल ऐसे चमकने लगा जैसे वह युवतियों की कुसुम्भी काञ्चुकी से निचोडकर निकाला गया हो।[39]

यथा–

''क्रीड़ापरिक्षोभरयेण तासामुत्सरिते पङ्कजरेणुजाले।

कुसुम्भस्क्तादिव कञ्चुकातत् कृष्टं बभासेऽम्बुरुहाकराभ्यः।।''

इन वर्णनों के अतिरिक्त कवि ने सेतु बन्धन का वर्णन, तपोवन का वर्णन, आश्रम का वर्णन, पर्वत की शोभा का वर्णन, राक्षसिनियों के केलि का वर्णन आदि रूपों में भी प्रकृति चित्रण किया है।

सन्दर्भ–

1. जानकीहरणम् 3/4
2. वही 3/6
3. वही 3/7
4. वही 3/3
5. जानकीहरणम् 3/8,
6. वही 3/5
7. वही, 3/10
8. वही, 3/9
9. वही 3/11
10. वही, 3/13 इ0सं0
11. वही, 11/41, इ0सं0
12. वही 11/48
13. वही 11/51
14. जानकीहरणम् 11/52
15. वही 11/43
16. वही 12/5
17. वही, 12/7 इ0सं0
18. वही 12/15
19. वही 12/16
20. वही 12/14
21. वही 13/78 इ0सं0
22. जानकीहरणम् 3/64 इ0सं0
23. वही 3/65
24. वही 16/2
25. जानकीहरणम् 8/49 इ0सं0
26. वही 8/60
27. वही 16/4
28. वही 16/10
29. जानकीहरणम् 16/19, इ0सं0
30. वही 16/24
31. वही 16/18
32. जानकीहरणम् 8/66 इ0सं0

33. वही 8/67
34. वही 8/68
35. वही, 8/79
36. जानकीहरणम 8/83 इ0सं0
37. जानकीहरणम् 2/68, इ0सं0
38. वही 8/34
39. जानकीहरणम् 3/36 इ0सं0